दूसरा अध्याय

उपेंद्रनाथ 'अश्क' के एकांकियों का संक्षिप्त परिचय

उपेंद्रनाथ 'अश्क' के एकांकियों का संक्षिप्त परिचय

हिंदी एकांकी साहित्य में अश्क जी का नाम बड़े गौरव के साथ लिया जाता है। अश्क जी के एकांकी सजीव बन गए हैं। इन पर मैटरलिंग, स्टिड़बर्ग तथा ओनील आदि विदेशी नाटककारों का प्रभाव अवश्य पड़ा हुआ है, लेकिन अश्क जी ने उनकी तीव्रता तथा गंभीरता को ही पसंद किया है। उनके निराशावाद को पास फटकने भी नहीं दिया। अश्क जी का विशेषता यह है कि उनकी एकांकी बिलकुल जीवन के धरातल पर उभरते हैं। उनके एकांकियों का प्रधान गुण है पात्र के मानसिक संघर्ष का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण। मध्य वर्ग का बड़ा सजीव तथा हृदयग्राही चित्रण उनके एकांकियों में मिलता है। मध्य वर्ग जीवन की विसंगतियों और अंतर्विरोधों पर उन्होंने खुलकर प्रहार किए हैं। अश्क जी की और एक विशेषता है कि कथावस्तु के चुनाव में यथार्थवादी नाटकीय शिल्प दृष्टि का सफल प्रयोग किया है। इनके एकांकियों में कथोपकथन स्पष्ट, मार्मिक तथा अर्थपूर्ण होता है। वे स्वयं रंगमंच से संबंधित होने से उनके एकांकियों में अभिनेता का गुण अवश्य दिखाई देता है। हिंदी एकांकी विकास में अश्क जी का महत्त्वपूर्ण सहयोग है।

उपेंद्रनाथ अश्क द्वारा लिखित एकांकियों के विषय सामाजिक, पारिवारिक, मनोवैज्ञानिक, व्यंग्यात्मक आदि विविध प्रकार के हैं। अश्क जी के एकांकियों की विषय-वस्तु का संबंध सामाजिक जीवन की यथार्थता से है। समाज की छोटी-बड़ी अनेक समस्याओं को मध्यवर्गीय जीवन के विविध पात्रों को और नाटकीय महत्त्व रखेनेवाली घटनाओं को उनकी यथार्थवादी सूक्ष्म कला-दृष्टि सबका ठीक संतुलन करने में सफल हो जाता है। अश्क की सबसे बड़ी शस्ति हास्य और व्यंग्य है। इस तरह हास्य और व्यंग्य से यथार्थवादी सफल प्रयोग करने के बाद भी इस युग के श्रेष्ठ व्यंग्यगत बर्नाड शॉ का कोई प्रभाव नहीं पड़ा और इसी लिए उन्होंने अपनी मौलिकता को अक्षुण्ण रखा।

2.1 पर्दा उठाओ : पर्दा गिराओ -

'पर्दा उठाओ : पर्दा गिराओ' अश्क जी का अत्यंत लोकप्रिय एकांकी है। इस एकांकी में ऐमचर कल्बों की कठिनाईयों का हास्यमय चित्र प्रस्तुत किया गया है। नाट्य प्रदर्शन में

होनेवाले गड़बड़ी का वास्तविक चित्रण देखकर दर्शक हँसते-हँसते लोट पोट हो जाते हैं।

नौसिखिए लोग नाटक करने में कौनसी गलतियाँ कर जाते हैं इस नाटक में है। नाटक समिति के मुख्य कलाकार श्री. बलवीर के अचानक बीमारी हो जाने के कारण और नाटक की भूमिकाओं को इधर-उधर बदलने से नाटक की गड़बड़ी हो जाती है। नाटक खोलने के लिए उपयुक्त पात्रों का न मिलना, प्रदर्शन के समय पात्रों का बीमार पड़ जाना, पात्रों का रंगमंच पर अपना पार्ट भूल जाना, पाटनर सो जाना और जागने पर जल्दी-जल्दी गलत संवाद बोलना, पात्रों का रंगमंच पर अपने अभिनेता रूप को भूलकर अपने अक्खड़ स्वभाव का परिचय देना आदि कुछ ऐसी कठिनाइयाँ हैं।

रामकिशन के संवाद की भाषा ग्रामीण और अक्खड़ संस्कार को प्रकट कर देता है। जब रंगमंच पर अभिनय में दी गई गाली सच्ची गाली समझकर क्रोध से भड़क उठता है और कहता है - ''देखो ! जबान तुम्हारि के बाति करो। बड़े महाराज बने फिरते है देने का एक रुपैया.... गारि देइ है तो मालुम होई पै भी न बताउब और उठाकर नीचे फेंक देब।''[1]

इस प्रकार इस एकांकी में हास्य का जो शुद्ध रूप और सहजता है वह अन्यत्र दुर्बल है। 'पर्दा उठाओ और पर्दा गिराओ' यह हास्य व्यंग्यात्मक प्रहसनों की एक अनमोल निधि है।

2.2 चरवाहे -

'चरवाहे' इस एकांकी मूल 'सेक्स' की समस्या है। रत्नी नामक एक ग्रामबाला इसका केंद्र में है। उसके जीवन की घुटन और निराशा की अभिव्यक्ति के लिए इस एकांकी की रचना की गई है। एक ओर उन्मुक्त रोमांटिक वातावरण है और दूसरी ओर रूढ़िवादी समाज। ऐसे समाज के परिवार में घुटती हुई रत्नी दिन काट रही है। बचपन में वह माँ की ममता से वंचित हो गई। पिता ने पुनर्विवाह कर लिया है। उसके मामा हृदयराम ने स्नेहवश उसे अपने घर में रखा। इस प्रकार वह विमाता के कोप से बच गई, परंतु मामी का व्यवहार किसी भी प्रकार का विमाता से अच्छा न हो सका। कभी भी उसे अपना नहीं समझा।

प्यार और सहानुभूति को भूखी रत्नी का हृदय मामी के अनाचार के विरूद्ध विद्रोह कर उठता है। गोविंद उसकी भावनाओं का प्रतीक बन जाता है जिससे उसे प्रचुर प्यार मिला था

और जिसके पौरुष की छाया में उसने भावी जीवन के सपने संजोये है। उसी से प्रेरित होकर कामभावना जागृत होती है। काम की यह प्रबल भावना प्रत्येक युवती के हृदय में पनपकर अपना विकास चाहती है। उसकी यह भावना और भी प्रबल हो उठती है, जब वह युवावस्था में ही वृद्धत्व को प्राप्त कांत का भी प्रतिरोध देखती है। कांत का प्रतिरोध गोविंद के प्रति उसके आकर्षण को और भी गहन बना देता है, जिसका परिणाम रत्नी गोविंद के साथ भाग जाती है।

रत्नी का कार्य समाज-द्रोह है। सामान्यतः कोई व्यक्ति उसके इस कृत्य का समर्थन नहीं करेगा। संभवतः एक सामाजिक के रूप में 'अश्क' भी समर्थन नहीं देंगे किंतु समस्या नाटककार के रूप में उन्हें ऐसा करना पड़ा, क्योंकि समाज में व्याप्त जख्म की ओर संकेत करना साहित्यकार का धर्म है।

'चरवाहे' इस एकांकी में कथानक का मुख्य संघर्ष सजीवता और निर्जीवता का ही है।

2.3 मैमूना -

प्रस्तुत एकांकी में 'आमना' नामक एक ऐसी नारी की कथा कही गई है, जो ऐश्वर्य और वासनांध होकर भटकती रहती है। प्रारंभ में आमना अरशद के सौंदर्य पर मुग्ध थी, किंतु ऐश्वर्य के मोह में पड़कर साजिद की बेगम बन जाती है। वह साजिद से प्यार नहीं कर पाती। साजिद के साथ रहते उसे एक बेटी पैदा होती है जिसका नाम है मैमूना। कुछ दिन बाद साजिद की मृत्यु हो जाती है और आमना अरशद से विवाह कर लेती है किंतु अब भी वह स्थिर नहीं रह पाती। अशरद को यह समझने में देर नहीं लगती है, आमना ने अपनी एक अलग हस्ती बना ली है - "धन दौलत के बनावटी और बेजान अदब-आदाब की हलरों पर तैरनेवाली हस्ती आमना गरीब, बेपरवाह और आज़ाद अरशद को सोसायटी के अबद-आदाब सिखाकर पालतू कुत्ते की तरह साथ-साथ लिए घूमना चाहती है।"[2]

आमना एक पतनशील चरित्र है। वह सदा दुहरी जिंदगी जीती है। साजिद से ब्याह करके अरशद की रही और फिर अरशद से ब्याह करके माजिद की प्रेमिका बनी। इस प्रकार उसने अपने पतियों को सदैव धोखा दिया। उसकी अस्थिरता का मूल कारण उसकी अतृप्त वासना, उसका ऐश्वर्य का मोह है। नित नए पुरुष की चाह उसके चरित्र को कुत्सित बना देती है। वासनांध

होकर वह मैमूना पर तरह-तरह के अत्याचार करती है। अपनी उद्दाम वासना के कारण वह नारी न रहकर वासना की प्रतिमा बन जाती है। एकांकीकार का इसके पीछे यह उद्देश्य है कि नारी ऐश्वर्य और वासनांध बनकर अपना स्वाभाविक कर्म भूलकर लिप्सा के पाने के लिए दर-दर भटकती है।

'मैमूना' इस एकांकी में नायिका आमना के चरित्र में बुर्जूआ संस्कृति की प्रतिगामी आधुनिक नारी के अंतर्विरोधों का मनोवैज्ञानिक उद्घाटन होता है।

2.4 ***चुंबक -***

इस एकांकी की मूल समस्या सेक्स की है। गौतम इसका केंद्र में है। वह एक भावुक कवि है। पुरुष अथवा नारी के आकर्षण के अनेक कोण हैं। शारीरिक स्वास्थ्य, सौंदर्य, यश अथवा ख्याति के अतिरिक्त पुरुषों की लच्छेदार, रोमानी, प्यार-भरी बातें अथवा करूण उपजाने पत्र हमेशा भावुक तरूणियों को आकर्षित करते आए हैं। प्रस्तुत एकांकी में चुंबक के इन दोनों पहलुओं को उजागर करने का प्रयास किया है।

गौतम भावुक कवि है जो अपनी कविताओं से सरिता को मुग्ध कर उसे चाहने लगता है। अभी तक गौतम और सरिता का साक्षात्कार नहीं हुआ है। दोनों का परिचय पत्राचार तक सीमित है। गौतम चुंबक की तरह गोपा और सरिता को अपने इर्द-गिर्द घुमाता है। सरिता रोमांटिक युवती है और गोपा संयमित और बौद्धिक है। गौतम और सरिता का परिच्चय उस समय हुआ जब उसने अपनी एक कविता गौतम के पास संशोधनार्थ भेजी थी। गौतम ने उसे एक पत्र लिखा है - ''बस जीवन का चक्कर चल रहा है। घूमे जा रहा है, मेरी बेकली या उदासी के लिए रूकेगा नहीं। ....कभी-कभी लगता है जैसे जीवन अथाह सागर है - ठहरा और रूका हुआ - और मेरी उदास और खामोश खड़ियाँ बेबस और लाचार। इसमें हाथ पैर मार रही है।''[3]

गौतम ने सरिता और गोपा दोनों को आकर्षित कर लिया था। दोनों उसके आकर्षण में खिंच गई थी। संयोगवश गोपा गौतम के जाल से बच जाती है।

2.5 ***चिलमन -***

'चिलमन' इस एकांकी में हरि के चरित्र में मनोवैज्ञानिक स्वरूप को स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है। हरि एक भावुक कवि है। उसकी पत्नी किरण रीढ़ की हड्डी से बहनेवाले

घातक नासूर से पीड़ित है। पिछले चार वर्षों से वह बिस्तर पर पड़ी है। अपनी असाध्य बीमारी के कारण हिलने डुलने में असमर्थ किरण विवशता एवं करूणा की मूर्ति बनी हुई है। सभी घरवाले उससे निराश हो चुके हैं किंतु हरि सारे दिन उसके सिरहाने परेशान सा बैठा रहता है। किरण का शरीर दिन-ब-दिन क्षीण होता जा रहा है लेकिन हरि इंजेक्शन दे-देकर प्लास्टर चढ़ा-चढ़ाकर उसे स्वस्थ करने का प्रयास करता रहता है। निरंतर मृत्यु की ओर बढ़ती हुई किरण प्रकाश के लिए तड़फड़ाती है। एक ओर वह मृत्यु की भयावह छाया से आक्रांत है, दूसरी ओर अतृप्त अकांक्षाएँ उसके हृदय को उद्वेलित कर रही है।

शशि नाम की एक दूसरी लड़की हरि से प्रेम करती है। हरि के परिवारवाले चाहते हैं कि हरि और शशि का संबंध हो जाए। शशि हरि से मिलने आयी है किंतु हरि उससे मिलने के लिए किरण को छोड़ नहीं पाता। मनोहर हरि का मित्र और शशि का प्रेमी है, उसके इस व्यवहार से हैरान है। उसका कथन है कि हरि किरण की बीमारी से इसलिए खेल रही है कि उससे उसे कविता लिखने की प्रेरणा मिलती है।

" 'चिलमन' जिस प्रतीक रूप में यहाँ प्रयुक्त हुई है, उसका संकेत जड़ और जगम दोनों ही ओर है। एक और भौतिक वस्तु के रूप में किरण के सामनेवाली खिड़की पर पड़ी चिक है जो सत्यमय हरि के वासनात्मक आकर्षण के कारण उसकी आँख पर पड़े पर्दे की भाँति पति-पत्नी के मध्य खड़ी है। और चिलमन उस सत् और असत् के मध्य पड़ी वह प्रतीक भावना है।"[4]

हरि शशि की ओर आकर्षित है, शशि चिलमन बनकर उसका प्रकाश ले रही है। हरि शशि की ओर आकर्षित भले ही नहीं, पर इतना जानता है कि शशि की उसकी ओर आकर्षित है। हरि अपने मोह का त्याग उस समय करता है जब किरण की आँखे सदा के लिए मिट जाती हैं। हरि के वासनात्मक आकर्षण के रूप में शशि उसकी आँख पर पड़े पर्दे की भाँति पति-पत्नी के मध्य खड़ी है। किरण मृत्यु के बाद हरि को अपने कृत्य पर पश्चाताप होता है और पट निश्चय करता है कि शशि उसकी दुनिया में अब कभी नहीं आ सकती।

'चिलमन' इस एकांकी में किरण यक्ष्मा से ग्रसित है। हरि अपनी पत्नी से विश्वासघात करता है। वास्तव में हरि ग्रंथियों का शिकार है। बीमार पत्नी की मृत्यु के बाद शशि उसकी दुनिया में नहीं आ सकती।

2.6 *सूखी डाली।*

'सूखी डाली' इस एकांकी में पारिवारिक विघटन की समस्या है। इसमें नए पुराने संघर्ष का दिग्दर्शन किया है। एकांकीकार ने संयुक्त परिवार से यदि अपेक्षित सूख और संतोष नहीं मिलता, तो ऐसे परिवार को बरबस एक में खींचकर चलना नीरी मूर्खता है यही दिखाया है। इस एकांकी में एक अहंवादी कुंठित और रूढ़िग्रस्त कॉम्पलेक्स का चित्र साकार किया है वह अद्‌वितीय है।

आज परिवार की परिभाषा बदल गई है। पहले जिसे हम परिवार कहते थे, आज वह संयुक्त परिवार के नाम से जाना जाता है। पुराने बंधन टूटते जो रहे हैं।

'सूखी डाली' इस एकांकी के केंद्र में है बेला। बेला नव-विवाहित वधू है जो अपने ससुर की पारिवारिक एकता की नीति पर ध्यान न देकर अलग गृहस्थी बसाना चाहती है, क्योंकि घर की अन्य सदस्य उसकी रुचि के नहीं। ससुर घर का रूढ़िबद्‌ध वातावरण उसे पसंद नहीं है। घर में सबसे छोटी होने के कारण जब सभी उसे आदेश देते हैं तब उसका अहं और कुंठित होता है। परेश दादा से कहता है कि बेला का मन इस घर में नहीं लगता। अनुभवी दादा को जब पता लगता है कि बेला घर की इकाई नष्ट करने पर कटिबद्‌ध है तो वह परिवार के प्रत्येक सदस्य को बेला को प्रसन्न रखने का आदेश देते हैं। बेला परिवार की परिवर्तित स्थिति देखकर अवाक रह जाती है। परेश से वह कहती है - ''मुझे लगता है जैसे मैं परायों में आ गई हुँ। कोई मुझे नहीं समझता, किसी को मैंन नहीं समझती। ....सब मुझसे ऐसी डरती हैं, जैसे मुर्गी के बच्चे चील से।''[5]

बेला परिवार से उपेक्षा पाकर असंतुष्ट थी, आदर और सम्मान पाकर भी घुटती रहती है। प्रत्येक स्थिति में बेला को असंतुष्ट देखकर परेश परेशान है। वे बेला से कहते हैं - ''तुम्हें शिकायत थी कोई तुम्हारा आदर नहीं करता, अब सब तुम्हारा आदर करते हैं। तुम्हें शिकायत थी, तुम्हें सबसे दबना बड़ता है, अब सब तुमसे दबते हैं। तुम्हें शिकायत थी, तुम सबका काम करती हो, अब सब तुम्हारा काम करते हैं। आदर, सत्कार, आराम न जाने तुम और क्या चाहती हो।''[6]

बेला के माध्यम से नाटककार इस ओर संकेत करता है। शिक्षित और अशिक्षित नारियों के बीच संघर्ष पैदा हो गई है।

'सूखी डाली' की समस्या भारतीय समाज की एक महत्त्वपूर्ण समस्या है। अनेक परिवार इससे पीड़ित हैं। अनेक लोग इसमें पड़े सूख रहे हैं।

2.7 तौलिये -

अश्क जी की लोकप्रिय और प्रसिद्ध एकांकियों में से एक प्रसिद्ध एकांकी है। 'सफाई के सनक' इसकी प्रमुख समस्या है। अपनी सफाई की सनक को हद तक पहुँचानेवाली मधु (पत्नी) और उस सनक को अपनी ओर से पूरी तरह संभाल न सकनेवाले उसके पति वसंत के पारिवारिक संघर्ष, मनोवैज्ञानिक उतार-चढ़ाव के साथ कहानी पेश की गई है। वसंत भी सफाई का कायल है परंतु केवल उसके लिए दूसरों की भावना को आघात पहुँचाकर तुच्छ समझना उसे पसंद नहीं। इस कारण उसके सनकी पत्नी मधु के साथ हर दिन खटके उड़ते हैं।

यह झगड़ा केवल पति-पत्नी का नहीं, केवल दो विपरीत स्वभावों का नहीं, तो दो प्रकार के सामाजिक संस्कारों, दो दृष्टिकोणों का यह संघर्ष है।

घर के प्रत्येक व्यक्ति और प्रत्येक काम के लिए उसने अलग-अलग तौलिये रखे हैं। मधु के पति वसंत उसकी इस सनक का विरोध करते हुए कहते हैं - ''बुरी नहीं, न सुरूचि बुरी है, पर तुम तो हर चीज को सनक की हद तक पहुँचा देती हो और सनक से मुझे चिढ़ नहीं है।''[7] अपनी इस सनक के कारण एक ओर मधु पति के व्यवहार से कुढ़-कुढ़कर अपने स्वास्थ्य का सत्यानाश करती है, दूसरी ओर अनजाने उसमें पति प्रतिघृणा की भावना का निर्माण होता रहता है। वसंत मधु की उस भावना को स्पष्ट करते हुए कहते हैं - ''तुम्हारी इस विषाक्त हँसी में, मैं जानता हूँ, कितनी घृणा छिपी है और मुझे डर है कि किसी दिन मैं सचमुच पशुन बन जाऊँ। ....मेरा जी चाहा करता है कि मैं तुम्हारी इस हँसी का गला घोट दूँ। ....मेरा जी चाहा करता है कि मैं तुम्हारी इस हँसी का गला घोट दूँ। घृणा-तुम मेरी हर बात से घृणा करती हो मुझे पशु समझती हो।''[8]

इस एकांकी के माध्यम से नाटककार ने मनोवैज्ञानिक सत्य का उद्घाटन किया है। अश्क जी ने 'सनकी' समस्या के साथ-साथ यह भी दिखाना चाहा है कि ऐसी सफाई, सभ्यता और

शिष्टाचार असली सुसंकार की तुलना में कितने दिखावटी, औपचारिक और अशोभनीय मालूम होती है। अभिजात वर्ग की संस्कृति, सुरूचि, शिष्टाचार स्वभाव की विशेषता को खोलकर रख देने में उन्हें सफलता मिली है। मधु बचपन से ऐसे वातावरण में पली है जहाँ समाज के दूसरे वर्ग को असभ्य और गँवार समझना सिखाया गया है। अपने इसी संस्कारों से मधु मजबूर है अत: वह वसंत से, उसके गंदे व्यवहार से नफरत करती है। ऐसे सनकी स्वभाव के कारण न स्वयं जीवन के सूख लेती है न वसंत को लेने देती।

2.8 पापी -

'पापी' इस एकांकी में मूल समस्या वासना की है। शांतीलाल की पत्नी छाया यक्ष्मा से पीड़ित होकर मृतप्राय हो गई है। शांतिलाल अपनी माँ के दुर्व्यवहार से परिचित है। अत: माँ पर भरोसा न रखकर वह छाया की छोटी बहन रेखा को उसकी सेवा करने के लिए बुला लेता है। धीरे-धीरे शांतिलाल और रेखा का परस्पर संबंध निकट आ जाते हैं। छाया अनुभव करने लगती है कि रेखा उसके सुनहले संसार में आग लगा रही है। अकस्मात एक दिन वह अपनी आँखों से बहन की बेइमानी देख लेती है और आश्चर्य हो जाती है। यद्यपि वह जानती है कि वह कुछ दिनों की ही मेहमान है, परंतु अपनी आँखों के सामने अपने सुहाग में आग लगते कैसे देखे ?

रेखा को अपने कृत्य पर पश्चाताप होता है। वह अनुभव करती है कि बहन का दु:ख बँटने की अपेक्षा वह उसे मृत्यु के समीप लिए जा रही है। वह शांतिलाल का घर छोड़ देने का निश्चय करती है। रेखा जानती है कि शांतिलाल को छोड़कर वह सुखी नहीं रह सकेगी, परंतु शांतिलाल को कर्तव्य प्रति सचेत करने के लिए रेखा वहाँ से चली जाती है।

शांतिलाल पापी है। एक ओर वह अपनी पत्नी के साथ विश्वासघात करता है दूसरी ओर वह रेखा के जीवन के साथ खेलता है, उसके भोलेपन का अनुचित लाभ उठाता है। छाया की मृत्यु के बाद वह अनुभव करता है - ''रेखा भी चली गई, छाया भी चली गई। चारों ओर अंधेरा है, सिर्फ मैं इस अंधेरे में भटकने के लिए रह गया हूँ - छाया देवी थी, रेखा भी देवी है, मैं ही नीच हूँ, मैं ही पापी हूँ।''[9]

मूल समस्या के अतिरिक्त नाटककार ने सास-बहू के कटू संबंध की ओर भी संकेत किया है। भारतीय नारी पति के विश्वास के सहारे जीवित रहती है, अतः पुरुष को विवेकवान होना चाहिए, अन्यथा वह अपने पतन के साथ-साथ दूसरों के पतन का भी कारण बन जाता है।

2.9 आपस का समझौता -

'आपस का समझौता' इस एकांकी में डाक्टरों की बेकारी का चित्र खींचकर उनके द्वारा की जानेवाली डकैती पर व्यंग्य किया गया है। डॉ. वर्मा दंत चिकित्सक है और डॉ. कपूर नेत्र-विशेषज्ञ। दोनों में से किसी की भी प्रैक्टिस नहीं चलती है। अतः वह आपस में समझौता करते हैं कि वे एक-दूसरे के यहाँ रोगी भेजने में साहायता करेंगे। लेकिन परस्पर के सहयोग के लिए भी तो रोगी चाहिए जो उनके पास नहीं है।

डॉ. वर्मा और डॉ. कपूर के यहाँ अपना सम्मान बनाने के लिए अपने साले प्रतुल को भेजता है। डॉ. कपूर प्रतुल की आँख खराब कर देता है ताकि उसको चश्मा लगवाना पड़ता है। डॉ. कपूर का कोई संबंधी डॉ. वर्मा के यहाँ चिकित्सा के लिए आया हुआ है। आवेश में आकर डॉ. वर्मा निर्णय करता है कि वह उसके सारे दाँत उखाड़ देता है और मसूड़ों में नासूर कर देता है। आज आर्थिक प्रवृत्ति इतनी बलवंती हो चुकी है कि सेवा भावना और नैतिकता का कोई मूल्य ही नहीं रह गया है। हमारे न्याय-विधान में न तो ऐसे दुष्कर्मियों के लिए किसी दंड की व्यवस्था है। डॉ. वर्मा कहते हैं - "बकवास ! यह बात है परतूल कि सरक्युलर रोड़ पर नए डॉक्टर आए हैं न, ...उनसे मैं समझौता किया है कि वे मुझे दाँतों के रोगी भेजा करें .... उनमें से पच्चीस प्रतिशत एक-दूसरे को कमीशन दे दिया करेंगे। आपस का यह समझौता हममें हुआ है। इससे हम दोनों को दोहरा लाभ है।"[10]

इस प्रकार बेकारी डाक्टरों की सूक्ष्म मनोवैज्ञानिकता की चतुराई को नाटककार ने मानव के घटते मूल्यों के सूक्ष्म अध्ययन करते हैं। जो धन के लिए एक मनुष्य को लाभ की जगह हानि पहुँचाने में नहीं हिचकते हैं। आज नैतिकता और सेवा-भावना का मूल्य पैसा बन चुका है।

2.10 तूफान से पहले -

सन् 1946 ई. में स्वातंत्रता प्राप्ति से कुछ पहले सांप्रदायिक दंगो की जो आग भड़क रही थी, उसी का यथार्थ चित्रण इस एकांकी में प्रस्तुत किया है। भारत का जब स्वतंत्र संग्राम चल रहा था - उस भूमिका में हिंसा और अहिंसा, पशुता और मानवता, क्रूरता और दया, लोलुपता और त्याग का संघर्ष भी चल रहा था उसी यथार्थ चित्रण इस एकांकी में है। बंबई के एक मुहल्ले में यह खबर फैलती है कि दूसरे मुहल्ले में दंगा हो गया है जिसमें कुछ मारे गए हैं। झूठी खबर के आधार पर इस मुहल्ले के हिंदु-मुसलमानों को मारने के लिए तैयार हो जाता है। घीसू अपनी पुरानी मशीन से कपड़े सीलकर रोजी रोठी कमानेवाला यह सब नहीं चाहता है। लेकिन उसके न चाहने से कुछ अंतर नहीं आ सकता। हिंदू लोग न्याज मियाँ के घर पर हमला करते हैं और हयातू को मार डालते हैं और फिर न्याज की ओर बढ़ते हैं। न्याज मियाँ साफ दिल के इन्सान हैं। वे इस झगड़े से दूर रहना चाहते हैं। अंत में न्याज की रक्षा के प्रयत्न में गिरधारी के छुरे से मारा जाता है। न्याज भी मार डाला जाता है। अंत में मालूम होता है कि दंगे की खबर झूठी थी। मरने से पूर्व घीसू बख्शू के संरक्षण का भार अपनी पत्नी को सौप जाता है। नाटककार ने एकांकी के अंत में मानवीय आदर्श की ओर संकेत किया है जिस पर घीसू ने अपने जीवन का बलीदान दिया। मरने से पूर्व घीसू कहता है - एक तूफान आ रहा है। भयंकर तूफान आ रहा है जिसमें ये सब दादे, ये गुंड़े, ये धर्म और जात-पाँत के दर्प, गरीबों का लोह चूसनेवाले पूँजीपति ये भोले-भोले लोगों को.... यहाँ हिंदू मुसलमान न होंगे। काले गोरे न होंगे। सब इन्सान होंगे। भाई-भाई होंगे।''[11]

2.11 जोंक -

'जोंक' इस एकांकी में बिना बुलाये मेहमान के जोंक की तरह चिपक जाने की प्रवृत्ति का चित्रण किया है। बनवारीलाल भोलानाथ के संकोची स्वभाव का अनुचित लाभ उठाना चाहता है। वह उनके यहाँ आकर बस जाता है फिर हटने का नाम नहीं लेता है। भोलानाथ और उसकि पत्नी कमला दोनों उसके लिए परेशान है। इस मेहमान के कारण कमला को जमीन पर सोना पड़ता है और ठंड़ी में ठिठुरना पड़ता है। भोलानाथ का मित्र आनंद उसे भगाने का प्रयत्न करता है लेकिन इस प्रयत्न में वह उलझ जाता है और एक पंजाबी के हाथों से उसे कई थप्पड़ भी खाने पड़ जाते हैं।

इस एकांकी में 'मान सम्मान', 'मैं तेरा मेहमान' वाला प्रवृत्ति बतई गई है। शिष्टाचार कभी-कभी बहुत ही महँगा पड़ जाता है।

2.12 *देवताओं की छाया में -*

'देवताओं की छाया में' शोषित मजदूर वर्ग की विपत्तियों का चित्रण किया है। वर्तमान समाज की समस्याओं का चित्रण करके वर्गभेद की ओर संकेत करता है। म. गांधीजी ने कहा था कि भारत देहात का देश है लेकिन आज यह अनुभव किया जा रहा है कि शहरों का आकर्षण बढ़ रहा है। ज्यों-ज्यों जीवन का स्तर विकसित होता जा रहा है, आज शहरों के आस-पास मीलों तक आबादी बढ़ती जा रही है। यह बढ़ती हुई आबादी कई निकटवर्ती गाँवों तक भी पहुँच जाती है। काकूके ऐसा गाँव है जिसके समीप देवनगर नामक नई बस्ती बन रही है। एक व्यवसायी सोसाइटी ने शिष्ट कला व्यवसाय में निपुण है। देवनगर के निकटवर्ती गाँवों के धरती विहीन मजदूर वहाँ सुबह सात-आठ से शाम के सात-आठ बजे तक सर्दी-गर्मी में काम करते रहते हैं। वस्तुस्थिति यह है कि बारह-बारह घंटे काम करने पर पाँच-छः आने प्रतिदिन की मजदूरी मिलती है। मजदूरी के लोभ से उन्हें अपनी जान भी देनी पड़ती है।

आज शहरों का आकर्षक वातावरण के कारण देहात के सहज स्वस्थ जीवन विद्रूप हो रहा है। सादिक आठवीं कक्षा तक पढ़कर स्वयं को शिक्षित समझने लगता है और शारिरिक काम नहीं करता है। शहरी प्रभाव के कारण वह अपनी पत्नी को देहात की स्त्रियों की तरह पर्दा नहीं करने देता। उसके लिए नए-नए फॅशन की वस्तुएँ खरीदता है। 'भरो' के शब्दों में परंपरागत बंधनों में बँधी भारतीय नारी की करूण आत्मा साकार हो उठी है - "हम लड़कियाँ हैं, हम अपनी इच्छा से हँस नहीं सकती, बोल नहीं सकतीं, हिलडुल नहीं सकती। चाहे जी में घुट-घूटकर मर जयें।"[12]

2.13 *सयाना मालिक -*

'सयाना मालिक' इस एकांकी में मध्यवर्गीय घरों में नौकरों की समस्या है। इसकी समस्या शहरी घरों की समस्या है। ईमानदार नौकर न मिलने के कारण शहरी लोगों को कौन-कौन-सी समस्या होती है इसका चित्रण इस एकांकी में किया गया है। लीकू का नौकर घर का सारा

बर्तन लेकर भाग जाता है। उनके सभी पड़ोसी गुप्ता के घर बैठकर लीकू का मजाक उड़ाते हैं। गुप्ता का यह दाबा है कि वह सयाना मालिक है। वे नौकर 'एम्लायमेंट एक्सचेंट' लेते हैं और स्वयं भी सावधानी रखते हुए भी नौकर धोखा देता है। उनका दावा सिद्ध होता है कि उनका नौकर चार हजार रुपए लेकर भाग गया है। नाटककार ने पुलिस की उत्तरदायित्वहीनता पर भी व्यंग्य किया है। पुलिस से रिपोर्ट लिखना चाहते हैं तो पुलिस अधिकारी बिना रिश्वत के कुछ करने के लिए तैयार नहीं होते हैं। आज पुलिस की साहयता से भी न्याय प्राप्त करना असंभव हो गया है।

2.14 मस्के बाजों का स्वर्ग -

'मस्के बाजों का स्वर्ग' इस एकांकी में फिल्मी कलाकारों पर लिखा गया है। सिनेमा संसार एक ऐसी जगह है जहाँ योग्यता को महत्त्व नहीं दिया जाता है। प्रतिभाशाली व्यक्ति की संपूर्ण योग्यता यहाँ व्यर्थ हो जाती है। मस्केबाज यह कलाकार नाम और ऐश्वर्य दोनों पा सकता है। आज कुछ कलाकारों द्वारा कला और संस्कृति की हत्या हो रही है। यहाँ असामाजिक तत्त्वों को आश्रय दिया जाता है। अश्क जी ने सिनेमा जगत् में बड़ी हुई खूबी के खोखलेपन को साकार कर दिया है। सिनेमा से आज की राष्ट्रीय संस्कृति का जो ऱ्हास हो रहा है, इसका मूल कारण है पूँजीपति। इसके कला, साहित्य, संस्कृति की देश को भी कोई चिंता नहीं है। आज पैसे को ही सब कुछ माननेवाले कला और संस्कृति की चिंता नहीं है। फिल्मी अभिनेता परेश कहते - ''यहाँ किसी साहित्यिक के लिए अभी जगह नहीं।''[13] दूसरे उत्तर में इसका स्वाभिमानी दूसरा कलाकार मित्र हरिश कहता है - ''अच्छे साहित्यिक के लिए अभी कहीं भी जगह नहीं।''[14]

2.15 अधिकार का रक्षक -

'अधिकार का रक्षक' इस एकांकी में पूँजिवादी नेताओं पर व्यंग्य किया गया है। इस नाटक के प्रमुख पात्र मि. सेठ चुनाव के लिए जिस प्रकार ढोंग रचते, (जिनकी करने का कुछ और बालने का कुछ) आज के नेताओं के ढोंगी रूप का ही चित्रण है। एक ओर हरिजन सभा के मंत्री से बात करते हुए पीड़ित और पद्दलितों को ऊपर उठाने का वायदा करते हैं, दूसरी ओर अपने नौकर को बुरी तरह गालियाँ देते हैं। नौकर उन्हें पैसे माँगने पर डाँटते हैं। घर में अपने नौकर पैसे

माँगने पर कहते हैं - "जा एक कौड़ी भी नहीं देते। निकल जा यहाँ से। जा, जा कर पोलिस में रिपोर्ट कर दे। पाजी, हराम-खोर! सूअर! आज तक सब्जी में, दाल में, सौदा सुफल में, यहाँ तक कि बाजार से आनेवाली हर चीज में पैसा रखता रहा। हमने कभी कुछ न कहा और अब यों अकड़ता है।"[15]

मि. सेठ सरला देवी से दावा करता है कि महिलाओं के अधिकारों का उससे अच्छा रक्षक उन्हें आज के नेताओं में नहीं है। परंतु मि. सेठ की पत्नी उसके व्यवहार से त्रस्त होकर मायके चली जाती है।

शिवदान सिंह चौहान ने इस एकांकी की व्याख्या करते हुए कहते हैं - "इस नाटक में 'अश्क' ने अधिकार प्राप्त वर्ग के सामाजिक और व्यक्तिगत जीवन, दरंगी नैतिकता का अत्यंत सजीव और यथार्थ चित्रण किया है। दलितों और शोषितों के प्रति सत्ताधारी वर्ग की मौखिक सहानुभूति और ऊँचे आदर्शों के मंत्रोच्चार का खोखलापन नाटक की वास्तविक दीन दुःखियाँ पात्रों के प्रति उनके आचरण व्यवहार से मूर्तित हो जाता है।"[16]

2.16 कइसा साहब! कइसी आया -

यह चरित्र प्रधान मनोवैज्ञानिक एकांकी है। जिसमें एक साहब एक आया की चारित्रिक दुर्बलता का चित्रण किया गया है। आया जब अपने पुराने साहब के यहाँ आती है और विगत जीवन की किस्से सुनाती है। साहब की वासनात्मक दृष्टि का उद्घाटन हो जाता है। साहब की जिस द्विधा, असमंजस, हीनता और उच्चता की शाव लहरियों पर एक अनिर्णयात्मक अवस्था का संकेत मिलता है। आया जब चली जाती है तब साहब के चहरे पर शून्यता छा जाती है उसका संकेत साहब के मनोभावों पर है।

2.17 फादर्ज -

'फादर्ज' इस एकांकी में बच्चों और माता-पिता का अध्ययन किया है। यह एकांकी मनोवैज्ञानिक से संबंधित है। वातावरण के प्रभावों के कारण एक विनम्र और सुशील बालक अपराधी बन जाता है। सिन्हा सहाब ने अपने लड़के राना को एक क्रिश्चियन स्कूल में भरती कराते

हैं। उस स्कूल के लड़के उसे बहुत परेशान करते हैं, वह रोता हुआ घर की तरफ आ जाता है। सिन्हा प्रधानाचार्य के पास बहुत बार शिकायत करते हैं लेकिन उन पर कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ता। सिन्हा अपने लड़कों को सिखाते हैं कि उन लड़कों को पीटा करे। एक दिन राना से एक लड़के की बाँह टूट जाती है। प्रधानाचार्य बदनामी के डर से राना को स्कूल से निकाल देता है। अंत में सिन्हा अपनी गलती स्वीकार करते हुए पत्नी से कहते हैं - ''तुम ठीक कहती थी कृष्णा, अगर हठ न किया होता, न्याय-अन्याय, मान-प्रतिष्ठा और अधिकार की बातों को छोड़कर राने को दूसरे स्कूल में भर्ती करा दिया होता तो न वह जालिम डिसूजा उसे पीटता, ...न वह रिंग लीड़र बनता और न वह यह हत्त्या करता।''[17]

75 प्रतिशत अध्यांपक आज तमाम डिग्रियाँ लेने के बाद भी वह अज्ञानी जैसा है। देश में बढ़ती अनुशासनहीनता इसका ज्वलंत उदाहरण है। अध्यापकों पर अगली पीढ़ी का भविष्य निर्भर रहता है। उनको क्लर्कों से कम वेतन पाते हैं। आज बेचारे अध्यापक घर का खर्च चलाने के लिए ट्यूशन लेते हैं। कई पार्ट टाईम काम करते हैं। आज के अध्यापक कोर्स की किताबों के अलावा कुछ नहीं जानते।

2.18 किसकी बात -

'किसकी बात' इस एकांकी में नारी से पुरुष की श्रेष्ठता बताई गई है। पुरुष चाहे अनपढ़, गँवार हो या पढ़ा-लिखा बुद्धिवादी, अपने को नारी से श्रेष्ठ समझता है। पंडित हृदयनारायण मिश्र का नौकर शंकर शुद्ध हिंदी सिखाने के प्रयत्न में अपनी पत्नी सोनिया से कहते हैं - 'मैं सरम से पानी-पानी हो गई' के स्थान पर 'मैं लज्जा से जल-जल हो गई' कटे लेकिन शंकर कह-कह कर थक गया, सोनिया ने न सुनी। शंकर और सोनिया का वार्तालाप मिश्र जी का लड़का दयानंद अपनी पत्नी मृदुला को सुनाता है। दयानंद और मृदुला दोनों एम्. ए. तक पढ़े हैं और नये विचारों को माननेवाले हैं। दयानंद जानता है कि शंकर की बात मूर्खतापूर्ण है, लेकिन एक बार कह जाने पर क्या बिगड़ जाता है। मिश्रजी को जब पता लगता है कि बहू और बेटे में इस छोटी-सी बात के लिए झगड़ा हो गया है तो वे अपनी पत्नी से कहते हैं - ''युवावस्था में यही तो दोष रहता है देवी

कि मस्तिष्क के बदले युवक-युवतियाँ भावनाओं को अपना पथ-प्रदर्शन बनाती है। .....अपने अधिकारों के पीछे प्राण देगी, पर अधिकार कैसे हस्तगत किए जाते हैं यह न समझेगी।''[18]

इस एकांकी के माध्यम से नाटककार ने यह बताया है कि तीनों पुरुष अनजाने अहं के शिकार हो जाते हैं।

2.19 अंधी गली -

'अंधी गली' इस एकांकी में भारत विभाजन के बाद जिन समस्याओं एवं भ्रष्टाचारों का सूत्रपात हुआ, उन्हीं का चित्र अंधी गली में प्रस्तुत किया गया है। अधिकारियों की धाँधलबाजी, रिश्वतखोरी, पक्षपात एवं अन्याय का चित्रण किया गया है। विभाजन के बाद अपना सब कुछ खोकर लाखों शरणार्थी भारत में आए। उनके पुनर्वास और जीवन का प्रबंध करने का सरकार ने प्रयत्न किया। हमारे भ्रष्ट अधिकारियों के कारण उन्हें उपेक्षित लाभ न मिल सका।

शरणार्थियों की मजबूरी देखकर मकान मालिक तिगुना और चैगुना किराया माँगते हैं। सरकारी अधिकारी इन मामाओं को सुलझाने के लिए रिश्वत लेते हैं। लहानसिंह के माध्यम से नाटककार ने व्यंग्य किया है - ''अफसरां ते महकमियाँ दे पेट तोटे होदें ने ते शरणार्थियों दे पेट पलये कुछ पैदा नहीं।.... मकान ते दुकानां, लिसेंस ते दूसरे फायदे उन्हीं को मिल दे। हण जिहणें आफसरों नु खुश कर सकदे हण।''[19]

2.20 चमत्कार -

'चमत्कार' इस एकांकी में एक दवा बेचने वाले के माध्यम से धर्मांधता का चित्र प्रस्तुत किया है। ईसाइयों के मतानुसार ईसामसीह ने एक मृत लड़की को जिंदा कर दिया था। एक दिन मौलवी को सरे-बाजार में चुनौती देता है कि यदि ईसाईयों का दावा सच है तो पादरी ईसामसीह को बुलाये और मरी हुई मछली को जिंदा करें। इस समय एक घंटीवाला आकर कहता है कि वह मछली को जिंदा कर सकता है। अपने प्रभावशाली वक्तव्य द्वारा वह जनता में विश्वास पैदा कर अपनी दवाइयाँ बेचकर जाने लगता है। लेकिन घंटीवाला मछली को जिंदा नहीं कर सकता है। घंटीवाले की बातें झूठी हैं। उसी तरह धर्म के संस्थापकों की बातें भी झूठी हो सकती हैं। घंटीवाला

मछली को चाहे जिंदा न कर सके, लेकिन जनता को संतुष्ट करके उसने अपने काम बना लिया। इस प्रकार 'चमत्कार' एकांकी में धर्मांधता है।

2.21 पक्का गाना -

'पक्का गाना' इस एकांकी में फिल्म जगत् में संगीत तथा काव्यादि कलाओं के साथ किए जानेवाले दुर्व्यवहारों का चित्र प्रस्तुत किया है। नाटककार यह दिखाना चाहता है कि किस प्रकार लोग अर्थ-लोभ के मोह में कला का गला घोंटने में तनिक भी नहीं हिच्कते हैं। अज्ञान संगीतज्ञ, कलाकार और साहित्यिक किस प्रकार अपने को कला का उत्तराधिकारी, सर्जक और नियामक मान लेते हैं। और उनके अधूरे और असांस्कृतिक ज्ञान से किस प्रकार कला और साहित्य का स्तर नीचे गिरता जाता है। दिपक कहते हैं - ''प्रोड्यूसर के भी नहीं, पूँजीपति के हाथ में ! और पूँजीपति इस मशीन से जो कुछ पैदा करना चाहता है, वह आपका आर्ट-वार्ट नहीं, बल्कि रुपया है। उसे गालियाँ खा कर भी रुपया मिल जाय तो उसे समें भी झिझक न होगी।''[20]

निष्कर्ष -

जीवन को यथार्थ रूप में चित्रित करनेवाले एकांकीकारों में उपेंद्रनाथ अश्क जी सर्वश्रेष्ठ हैं। उनके सभी एकांकियों की आधारभूमि समाज है। अश्क जी ने केवल मनोरंजन के लिए ही अपने एकांककियों का निर्माण नहीं किया है। उनके एकांकियों में मध्यवर्गीय समाज की ज्वलंत समस्याओं को चित्रित किया गया है। अश्क जी ने जन-जीवन की सतत चेतना को अपने नाटकों का आधार बनाया और आज भी वे परंपरागत रूढ़ियों तथा संस्थाओं के विकृत अंगों का उद्घाटन करके हमें हमारे जीवन की वास्तविकताओं से परिचित कराते हैं तथा स्वस्थ जीवन जीने की प्रेरणा देते हैं। अश्क जी की दृष्टि केवल वर्तमान जीवन की समस्याओं पर केंद्रित है। नाटककार ने सम-सामायिक जीवन की विकृतियों की आलोचना करने के साथ-साथ उन्हें दूर करने की प्रेरणा भी दी है। अश्क जी सम-सामायिक जीवन के चित्रण में पूर्णतया सफल हैं और उनके समस्या नाटक हिंदी नाट्य क्षेत्र में अत्यंत सफल माने जाते हैं।

संदर्भ सूची

1. उपेंद्रनाथ अश्क, पच्चीस श्रेष्ठ एकांकी संग्रह, पृ. 54
2. वही, पृ. 154
3. वही, पृ. 233
4. डॉ. जगदीशचंद्र माथुर, नाटककार अश्क, पृ. 302
5. उपेंद्रनाथ अश्क, पच्चीस श्रेष्ठ एकांकी संग्रह, पृ. 200
6. वही, पृ. 201
7. डॉ. उमाशंकर सिंह, समस्या नाटककार अश्क, पृ. 153
8. वही, पृ. 165
9. उपेंद्रनाथ अश्क, पच्चीस श्रेष्ठ एकांकी संग्रह, पृ. 465
10. वही, पृ. 532
11. डॉ. उमाशंकर सिंह, समस्या नाटककार अश्क, पृ. 26
12. उपेंद्रनाथ अश्क, पच्चीस श्रेष्ठ एकांकी संग्रह, पृ. 496
13. वही, पृ. 174
14. वही, पृ. 174
15. वही, पृ. 225
16. डॉ. उमाशंकर सिंह, समस्या नाटककार अश्क, पृ. 73
17. उपेंद्रनाथ अश्क, पच्चीस श्रेष्ठ एकांकी संग्रह, पृ. 360
18. डॉ. उमाशंकर सिंह, समस्या नाटककार अश्क, पृ. 54
19. वही, पृ. 67
20. उपेंद्रनाथ अश्क, पच्चीस श्रेष्ठ एकांकी संग्रह, पृ. 38 377